सूखा: कारण एवं प्रबन्धन

Sukha: Karan evm Prabandhan

सूखा मानव द्वारा प्रकृति के मूल स्वरूप को परिवर्तित करने का परिणाम है। वनोन्मूलन, भू-जल का अति दोहन, जल संभरण को महत्त्व न देना, बड़े-बड़े जलाशयांे को पाटकर खेती के काम में लाना इत्यादि कारणों से जल स्त्रोतों की गुणवत्ता में ह्रास हुआ। फलस्वरूप अनेक स्थानों पर सूक्ष्म परिवर्तन से मानसून की स्वाभाविक क्रियाशीलता प्रभावित हूई। सूखे के लिए निम्नलिखित कारण मूलरूप से उत्तरदायी रहे हैं-

- **वर्षा की अनियमितता**
- **मानसून की अवधि अलग-अलग होना**
- **एल निनो एवं दक्षिणी दोलन**
- **थार के रेगिस्तान में न्यून अवदाब का अभाव**
- **तीव्र गति से वनोन्मूलन**
- **पारम्परिक फसल प्रतिरूप में परिवर्तन**
- **भू-जल का तीव्र दोहन**
- **अरब सागरीय जल पर सोमाली की ठण्डी धारा का प्रभाव**
- **वर्षा जल का कोई नियोजित प्रबन्ध न होना**

भारत में सूखे का सर्वाधिक प्रभाव उत्तरी-पश्चिमी भाग में स्थित थार के रेगिस्तान में बना रहता है। राजस्थान के अलावा अन्य जो राज्य सूखे से प्रभावित होते हैं- महाराष्ट्र, कर्नाटक और आंध्र प्रदेश के वृष्टि छाया प्रदेश जहां वार्षिक वर्षा काफी अनियमित है। उसके अलावा उत्तर प्रदेश का मिर्जापुर तथा बिहार का पलामू, पं. बंगाल का पुरूलिया और उड़िसा का कालाहांड़ी जिले भी सूखा से प्रभावित हैं।

सूखा प्रभावित क्षेत्रों में जमीन के अंदर नमी समाप्त होने से भू-जल स्तर घट जाता है और सतही जल स्त्रोत भी समाप्त हो जाता है। ऐसे क्षेत्रों में वृक्षारोपण में भी समस्या आती है। सूखाग्रस्त क्षेत्र में वर्षा-जल से ही नमी मिल पाती है। इससे कृषि और पशुपालन दोनों कामों में व्यवधान होता है। सूखें से हमारा पर्यावरण और सम्पूर्ण आर्थिक तंत्र प्रभावित होता है। इसके कारण स्वास्थ्य, गरीबी, कुपोषण एवं भुखमरी जैसी समस्याएं भी उत्पन्न होती हैं।

भारत में ऊष्ण कटिबंधीय जलवायु पाई जाती है, जिसके मौसमी परिदृश्य को जेट स्ट्रीम, एल निनो, वायुदाब में कमी आदि प्रभावित करते हैं। अतः सूखे से बचने के लिए इसके प्रबंधन से ज्यादा जरूरी मौसम की भविष्यवाणी करना है। अन्य जरूरी उपाय भी हैं।

देश में जल संरक्षण की स्थिति बहुत ही खराब है। हम जल स्त्रोतों को लगातार तबाह करते जा रहे हैं। विगत दशकों में शहरों के बीच में पड़ने वाले ज्यादातर ताल-तालाबों को बेरहमी से भरा गया है। सूखा प्रभावित क्षेत्रों में गैर परम्परागत फसलें- सोनमुखी, जोजोबा, तुम्बा आदि की खेती से किसान वर्षा की अनियमितता से बच सकता है और अच्छी आमदनी भी प्राप्त कर सकता है। रेगिस्तानी क्षेत्रों में पाए जाने वाली प्राकृतिक वनस्पतियां इन क्षेत्रों के लोगों द्वारा वर्षों से उपयोग में लाई जा रही हैं। जैसे खेजड़ी, केर, बेर, फोग, अडूसा, जाल, बारको, बबूल, जंगल जलेबी आदि। इन वनस्पतियों को उगाकर न केवल हरियाली लाई जा सकती है बल्कि सूखे के प्रभाव से भी बचा जा सकता है। अगर नदियों को सदानीरा (हमेशा जल से युक्त) रखा जाए तो मानसून की अनियमितता की आशंका को काफी हद तक कम किया जा सकता है। विकसित देशों में नहरों और सिंचाई परियोजनाओं (सुविधाओं) का जाल बिछा है, जिसके चलते वहां साल भर खेती होती है। किसानों को आसमान की ओर नहीं देखना पड़ता। भारत में नहरों का निर्माण तो हो रहा है लेकिन बहुत धीमी गति से। नहरों के निर्माण में कई वर्ष लग जाते हैं। अतः इस कमी को दूर कर नहरों के निर्माण कार्य को तीव्र करना होगा।

अन्य देशों की अपेक्षा भारत में कृषि-निवेश घटता जा रहा है। पहले सरकार कल्याणकारी राज्य की परिकल्पना के आधार पर कार्य करती थी। अब वह धीर-धीरे साहूकार की भूमिका में आती जा रही है। ऋण लेने के लिए किसानों को प्रोत्साहित किया जाता है। लेकिन मानसून थोड़ा भी गड़बड़ हुआ कि किसान तबाह हो जाते हैं। अतः सरकार को कृषि में

निवेश को बढ़ाना चाहिए। उपरोक्त के अलावा सूखे के दौरान तथा बाद में राहत कार्य संचालित करना भी सूखा प्रबन्धन के अन्तर्गत ही आता है।

जिन क्षेत्रों में सूखे की आशंका सदैव बनी रहती है, उन क्षेत्रों में सूखे से उपजी समस्याओं से निपटने के लिए 1973-74 में सूखा प्रवण क्षेत्र कार्यक्रम (क्तवनहीज च्तवदम ।तमं च्तवहतंउउम.क्च्।च्द्ध शुरू किया गया था। इन क्षेत्रों की विशेषता है कि उनमें जनसंख्या और पशुओं की संख्या दोनों काफी अधिक होती है, जिससे भोजन, चारे और ईंधन के लिए पहले सेे ही कमजोर हो चुके प्राकृतिक संसाधनों पर लगातार भारी दबाव पड़ता जाता है। इस सतत जैवीय दबावों से वनस्पतियों का क्षय होता रहता है, भूमि अपरदन बढ़ता है और भूजल का स्तर तेजी से घटता जाता है क्योंकि उसका लगातार दोहन होता रहता है तथा उसे रिचार्ज करने का कोई प्रयास नहीं किया जाता। कार्यक्रम का मूलभूत उद्देश्य फसलों और पशुधन के उत्पादन और भूमि, जल तथा मानव संसाधनों की उत्पादकता पर सूखे के प्रतिकूल प्रभाव को न्यूनतम करना है।

सूखा एक ऐसी प्राकृतिक आपदा है जिस पर मानव का कोई नियंत्रण नहीं है। सूखे से न केवल मानव जीवन पर प्रभाव पड़ता है बल्कि इससे प्राकृतिक सम्पदाओं एवं संसाधनों की भी कमी होती है। सूखा किसी भौगोलिक प्रदेश मंे उत्पन्न उस असामान्य मौसमी दशा को कहते हैं, जिसमें वर्षा की संभावना तो रही हो लेकिन वर्षा नहीं हुई हो। भारतीय मौसम विभाग के अनुसार सूखा उस दशा को कहते हैं जब किसी भौगोलिक क्षेत्र में सामान्य वर्षा से वास्तविक वर्षा 75 प्रतिशत कम होती है। इस आधार पर सूखे को दो श्रेणियों में बांटा जा सकता है- 1. प्रचण्ड सूखा और 2. सामान्य सूखा। जब वर्षा का अभाव सामान्य वर्षा के 50 प्रतिशत से अधिक हो तो उसे प्रचण्ड सूखा कहा जाता है और जब वर्षा का अभाव सामान्य से 25-30 प्रतिशत के बीच हो तो उसे सामान्य सूखा कहा जाता है।

जिस राज्य मंे सामान्य से 20 प्रतिशत कम वर्षा होती है उसे सूखाग्रस्त घोषित कर दिया जाता है। इस दशा को मौसमी सूखा कहते हैं। जब मौसम सम्बन्धी सूखा लम्बे समय तक चलता है, तो जलीय सूखा (भ्लकतवसवहपबंस क्तवनहीज) की स्थिति बन जाती है, जिसमें जल संसाधनों की कमी हो जाती है। कृषि सूखा की स्थिति में भूमि में नमी तथा वर्ष की कमी या अनियमितता के कारण कृषि कार्य प्रभावित होता है तथा उत्पादकता में कमी आती है। सूखे की एक स्थिति मृदा जनित सूखा भी है जिसमंे मृदा में नमी एवं जल की

इतनी कमी हो जाती है कि फसल ही सम्भव नहीं होती। कृषि सूखा में फसलें तो उगाई जाती हैं लेकिन उनकी वृद्धि के लिए वर्षा की मात्रा पर्याप्त नहीं होती। जब पर्यावरण की क्षति के कारण किसी पारिस्थितिकी तंत्र में उत्पादकता मंे कमी आ जाती है तो इसे पारिस्थितिकीय सूखा कहते हैं।

प्राकृतिक पर्यावरण में पादप एवं जीव जगत दोनांे जल पर निर्भर करते हैं। अतः सूखा सम्पूर्ण जीवमण्डल को प्रभावित करता है। एक ज्ञातव्य बात यह भी है कि हमारे देश में (भारत में) कुल 14.2 करोड़ हेक्टेयर कृषि क्षेत्र में से लगभग 9 करोड़ हेक्टेयर क्षेत्र वर्षा पर आश्रित है, जहां सूखे का खतरा मंडराता रहता है।